CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शाण्डिल्य भक्ति सूत्र

अ - २/13
आम्नाय-ग्रन्थालय,
[illegible]
[illegible]

ग्रन्थालय
ी, वाराणसी-५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२००९ से २०१२ तक १३,०००
२०१६ तृतीय संस्करण ३,०००

कुल १६,०००

आचार्य ग्रन्थालय,
भरतमिश्र, करौंदे
वाराणसी-5

मूल्य ·१० (दस नये पैसे)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्री—ग्रन्थालय,
वरुणनिधि, करौंदी
वाराणसी-5

श्रीराधाकृष्णाभ्यां नमः

शाण्डिल्य-भक्ति-सूत्र

(मुनिवर शाण्डिल्यद्वारा विरचित भक्ति-सूत्र)

प्रथम अध्याय

प्रथम आह्निक

अथातो भक्तिजिज्ञासा ॥ १ ॥

१—अब भक्ति-तत्त्वका विचार किया जाता है।

सा परानुरक्तिरीश्वरे ॥ २ ॥

२—वह (भक्ति) ईश्वरके प्रति परम अनुराग-रूपा है। (इसे ही पराभक्ति कहा गया है।)

तत्संस्थस्यामृतत्वोपदेशात् ॥ ३ ॥

३—क्योंकि ईश्वरमें जिसकी संस्थिति (सम्यक निष्ठा—भक्ति) है, वह अमृतत्वको प्राप्त होता

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

है, ऐसा श्रुतिका उपदेश है।* (अतः भक्तिकी जिज्ञासा आवश्यक है ।)

ज्ञानमिति चेन्न द्विषतोऽपि ज्ञानस्य तदसंस्थितेः ॥ ४ ॥

४–संस्थाका अर्थ ज्ञान है, अतः वह भक्ति ज्ञानरूप है, ऐसा कहें तो ? यह ठीक नहीं है; क्योंकि ज्ञान तो द्वेष रखनेवाले शत्रुको भी होता है, किंतु वह ज्ञातव्य व्यक्तिके प्रति उसकी निष्ठा (भक्ति) का बोधक नहीं होता । (अतः भक्ति ज्ञानरूप नहीं है ।)

तथोपक्षयाच्च ॥ ५ ॥

५–तथा भक्ति (के उदय होने) से ज्ञानका क्षय होता है । (इसलिये भी भक्ति और ज्ञानकी एकता नहीं है ।)

---

* ब्रह्मसंस्थोऽमृतत्वमेति । (छा० उ० २ । २३ । १)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तब भक्ति अनुरागरूप ही है इसमें प्रमाण ?

द्वेषप्रतिपक्षभावाद्रसशब्दाच्च रागः। ६॥

६—द्वेषकी विरोधिनी तथा रस[१] शब्दसे प्रतिपाद्य होनेके कारण भी भक्ति रागस्वरूपा है।

न क्रिया कृत्यनपेक्षणाज्ज्ञानवत् ॥ ७॥

७—भक्ति क्रियारूप नहीं है, क्योंकि ज्ञानकी भाँति वह भी कर्ताके प्रयत्नकी अपेक्षा नहीं रखती।

अत एव फलानन्त्यम् ॥ ८ ॥

८—इसीलिये भक्तिका फल अनन्त है।

तद्वतः प्रपत्तिशब्दाच्च न ज्ञानमितर-प्रपत्तिवत् ॥ ९ ॥

९—ज्ञानवान्‌का भी शरणागत होना बतलाया गया है;* अतः शरणागति (भक्ति) ज्ञानरूप नहीं है; जैसे सकाम अज्ञानी कामनावश अन्य

---

१. रसꣳह्येवायं लब्ध्वाऽऽनन्दी भवति (तै० उ० २ । ७) रसवर्जं रसोऽप्यस्य । (गीता २।५९)।

* ज्ञानवान् मां प्रपद्यते । (गीता ७ । १९) ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

देवताकी शरण लेते हैं* किंतु उनकी वह प्रपत्ति (शरणागति) ज्ञानरूप नहीं है, उसी प्रकार भगवच्छरणागति भी ज्ञानसे भिन्न है ।

प्रथम आह्निक सम्पूर्ण

द्वितीय आह्निक

सा मुख्येतरापेक्षितत्वात् ॥ १० ॥

१०—वह भक्ति मुख्य है; क्योंकि ज्ञानयोगादि इतर साधन उसकी अपेक्षा रखते हैं (अन्य साधन अङ्ग हैं और भक्ति अङ्गी है ।)

प्रकरणाच्च ॥ ११ ॥

११—(छान्दोग्यके) प्रकरण[1]से भी (भक्ति-

---

* कामैस्तैस्तैर्हृतज्ञानाः प्रपद्यन्तेऽन्यदेवताः ।
(गीता ७ । २०)

१. प्रकरण इस प्रकार है, छान्दोग्योपनिषद्में मन्त्र है

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

की ही मुख्यता सिद्ध होती है) (क्योंकि वहाँ रतिरूपा भक्तिका ही फल स्वाराज्य-सिद्धि बतायी गयी है ।)

दर्शनफलमिति चेन्न तेन व्यवधानात्॥१२॥

१२–यदि कहें, वहाँ दर्शनका ही फल (स्वाराज्य) बताया गया है, अतः प्रकरण भी उसीका है, तो ठीक नहीं; क्योंकि 'स स्वराड् भवति' (वह परमात्मास्वरूप हो जाता है) इस

आत्मैवेदं सर्वमिति स वा एष एवं पश्यन्नेवं मन्वान एवं विजानन्नात्मरतिरात्मक्रीड आत्ममिथुन आत्मानन्दः स स्वराड् भवति । (७ । २५ । २)

अर्थात् 'यह सब कुछ परमात्मा ही है; जो ऐसा देखता, ऐसा मानता और ऐसा समझता है, वह परमात्मामें परम अनुराग, परमात्मामें ही क्रीडा, उन्हीं-के संयोगका सुख तथा उन्हींमें आनन्दका अनुभव करता हुआ स्वराट् (परमात्मस्वरूप) हो जाता है ।' इसमें दर्शन, मनन एवं ज्ञान आदि साधन आत्मरति-रूपा भक्तिके अङ्ग हैं, यह स्वतः स्पष्ट हो जाता है ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वाक्यके 'सः' (वह) पदसे समीपवर्ती 'आत्मरतिः' पदका ही ग्रहण होता है; दूरवर्ती 'एवं पश्यन्' का नहीं; क्योंकि वहाँ उससे (आत्मरतिः आदि पदसमूहसे) व्यवधान पड़ता है। (अतः वहाँ दर्शनका नहीं, आत्मरतिरूपा भक्तिका ही फल स्वाराज्य-सिद्धि है।)

दृष्टत्वाच्च ॥ १३ ॥

१३—लोकमें ऐसा ही देखा भी गया है। (अर्थात् किसीके रूपका दर्शन, गुणका श्रवण या स्वरूपका परिचय पहले प्राप्त होता है और उसके प्रति अनुराग पीछे होता है। अतः दर्शन या ज्ञानका फल प्रीति है, प्रीतिका फल ज्ञान नहीं; इसलिये ज्ञान अङ्ग है और भक्तिकी ही मुख्यता है।)

अत एव तदभावाद्भूयस्त्वीनाम् ॥ १४ ॥

१४—क्योंकि ज्ञान अप्रधान है और भक्ति ही प्रधान

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitizaqtion by eGangotri

है; अतएव ज्ञानका अभाव होनेपर भी केवल परमानुरागरूप भक्तिसे ही गोपाङ्गनाओंकी मुक्ति हो गयी। (ऐसा पुराणोंमें वर्णन आता है।*)

भक्त्या जानातीति चेन्नाभिज्ञप्त्या साहाय्यात् ॥ १५ ॥

१५ 'भक्त्या मामभिजानाति' (गीता १८। ५५)—भक्तिसे मुझे भलीभाँति जानता है; इस वचनके अनुसार भक्ति ही साधन और ज्ञान ही साध्य है, ऐसा कहें तो ? यह ठीक नहीं है, क्योंकि वहाँ 'अभिजानाति' कहा गया है। अभिपूर्वक 'ज्ञा' धातुका अर्थ है अभिज्ञा; अभिज्ञा कहते हैं पहलेकी जानी हुई वस्तुके ज्ञानको। पहले ज्ञान हुआ फिर फलरूपा भक्ति हुई। वह भक्ति ही अभिज्ञप्तिरूपसे पूर्वज्ञानका स्मरण कराकर स्वयं ही जीवके भगवत्प्रवेशमें सहायक होती है।

---

* मयि भक्तिर्हि भूतानाममृतत्वाय कल्पते।
दिष्ट्या यदासीन्मत्स्नेहो भवतीनां मदापनः॥
(श्रीमद्भा० १०। ८२। ४५)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रागुक्तं च ॥ १६ ॥

१६—पहले ब्रह्मज्ञान होता है, फिर भक्ति, यह बात पहलेके श्लोकमें कही भी गयी है।*

एतेन विकल्पोऽपि प्रत्युक्तः ॥ १७ ॥

१७—ज्ञान अङ्ग है और भक्ति अङ्गी ऐसा निश्चय होनेसे इन दोनोंके विकल्प पक्ष (और समुच्चयवाद) का भी खण्डन हो गया।†

देवभक्तिरितरस्मिन् साहचर्यात् ॥ १८ ॥

---

* ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा न शोचति न काङ्क्षति।
समः सर्वेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते पराम् ॥
(गीता १८। ५४)

† ज्ञान अथवा भक्ति दोनों ही अङ्ग और दोनों ही अङ्गी हैं; किसीको भी प्रधान या गौण माननेमें आपत्ति नहीं है; ऐसी मान्यता 'विकल्प' है। जब एककी प्रधानता निश्चित हो गयी, तब दूसरा अप्रधान है ही। प्रधान और अप्रधान—अङ्गी और अङ्गमें 'विकल्प' नहीं होता। ज्ञान और भक्ति दोनों एक साथ रहकर ही मुक्तिके साधन होते हैं, यह समुच्चयवाद है; उक्त निश्चयसे इसका भी निराकरण हुआ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१८–(श्वेताश्वतरोपनिषद्में) गुरु-भक्तिके साथ पठित होनेके कारण देवविषयक भक्ति भी ईश्वरभिन्न देवताकी भक्तिका बोधक है ।*

योगस्तूभयार्थमपेक्षणात् प्रयाजवत् ॥१९॥

१९–योग तो ज्ञान और भक्ति दोनोंका साधन है; क्योंकि दोनोंमें उपकारक होनेके कारण उसकी अपेक्षा रहती है । यद्यपि योग मुख्यतः ज्ञानका अङ्ग है, तथापि जब ज्ञान भी भक्तिका अङ्ग है, तब उसीके साथ योग भी उसका अङ्ग हो सकता है; जैसे वाजपेय आदिका अङ्गभूत प्रयाज उसकी दीक्षा लेनेवाले व्यक्तिकी दीक्षाका भी अङ्ग माना जाता है ।

गौण्या तु समाधिसिद्धिः ॥ २० ॥

२०–'ईश्वरप्रणिधानाद् वा' इस योगसूत्रमें जो 'प्रणिधानाद्' आया है, वह गौणी भक्तिके अन्तर्गत

---

* यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ ।
(श्वेता० ६ । २३)

आम्नाय-ग्रन्थ

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

है, उस गौणी भक्तिसे ही समाधिकी सिद्धि होती है।

हेया रागत्वादिति चेन्नोत्तमाश्रयत्वात् सङ्गवत् ॥ २१ ॥

२१—यदि भक्ति रागरूपा है तो योगशास्त्रोक्त पाँच क्लेशोंमें परिगणित 'राग'में तथा इसमें कोई अन्तर नहीं है, ऐसी दशामें मुमुक्षुके लिये यह रागस्वरूपा भक्ति भी त्याज्य ही होगी, ऐसा कहें तो ठीक नहीं; क्योंकि इस रागका आश्रय उत्तम है—ईश्वरविषयक रागको भक्ति कहते हैं; अतः वह त्याज्य नहीं है। विषय-राग ही त्याज्य है। जैसे सङ्गको त्यागनेयोग्य बताया गया है; किंतु कुसङ्गका ही त्याग उचित माना गया है, सत्सङ्गका नहीं; क्योंकि संत-महात्मा सङ्गके उत्तम आश्रय हैं।

तदेव कर्मिज्ञानियोगिभ्य आधिक्यशब्दात् ॥ २२ ॥

२२—अतः भक्ति ही सर्वश्रेष्ठ है, यह बात निश्चित

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हुई; क्योंकि भगवान्‌ने कर्मी, ज्ञानी तथा योगी—इन सबकी अपेक्षा भक्तको ही श्रेष्ठ बताया है।*

प्रश्ननिरूपणाभ्यामाधिक्यसिद्धेः ॥२३॥

२३—(गीताके बारहवें अध्यायमें) अर्जुनके प्रश्न और भगवान्‌के उत्तरसे भी भक्तकी ही श्रेष्ठता सिद्ध होती है।

नैव श्रद्धा तु साधारण्यात् ॥ २४ ॥

२४—श्रद्धारूप ही भक्ति है, ऐसा नहीं मानना चाहिये; क्योंकि श्रद्धा साधारणतया कर्ममात्रकी अङ्गभूत है (किंतु ईश्वरभक्ति ऐसी नहीं है)।

तस्यां तत्त्वे चानवस्थानात् ॥ २५ ॥

---

* तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः।
कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद् योगी भवार्जुन ॥
योगिनामपि सर्वेषां मद्गतेनान्तरात्मना।
श्रद्धावान् भजते यो मां स मे युक्ततमो मतः ॥
(गीता ६। ४६-४७)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

२५—यदि श्रद्धाको भक्तिरूप मानें तो अनवस्था-दोष आता है।* इसलिये श्रद्धा भक्तिसे भिन्न है।

ब्रह्मकाण्डं तु भक्तौ तस्यानुज्ञानाय सामान्यात् ॥ २६ ॥

२६—श्रुतिमें जो ब्रह्मकाण्ड (ब्रह्मतत्त्वके निरूपणका प्रकरण) है, वह भक्तिके लिये ही है, ज्ञानके लिये नहीं; क्योंकि जैसे ब्रह्मकाण्ड अज्ञात अर्थका ज्ञान कराता है, उसी प्रकार जो शेष दो काण्ड हैं, वे भी अज्ञात अर्थका ज्ञान

---

* भगवान्‌ने गीतामें कहा है, 'श्रद्धावान् भजते यो माम्' (जो श्रद्धापूर्वक मेरा भजन करता है·····) इस प्रकार श्रद्धाको भक्तिका अङ्ग बताया है। यदि श्रद्धा और भक्ति एक है तो उसके अङ्गरूपसे आयी हुई श्रद्धा क्या है ? यदि यह भी भक्तिरूप ही है तो उसका अङ्ग भी दूसरी श्रद्धा हो सकती है, इस प्रकार यह परम्परा कहीं भी रुक नहीं सकती है; यही अनवस्था दोष है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कराते हैं। इस दृष्टिसे सभी काण्ड समान हैं। (यदि इतनेसे ही कोई ब्रह्मकाण्डको ज्ञानकाण्ड कह दे, तब तो धर्मज्ञान करानेवाले कर्मकाण्डको भी ज्ञानकाण्ड नाम दिया जा सकता है) अतः भक्तिके लिये ब्रह्मकाण्डका आरम्भ होनेके कारण उसे 'भक्तिकाण्ड' भी मानना चाहिये।

द्वितीय आह्निक सम्पूर्ण

प्रथम अध्याय सम्पूर्ण

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

द्वितीय अध्याय

प्रथम आह्निक

बुद्धिहेतुप्रवृत्तिराविशुद्धेरवघातवत् ॥२७॥

२७—बुद्धि (ब्रह्मज्ञान) के हेतुभूत श्रवण-मनन आदि साधनोंमें तबतक लगे रहना चाहिये जबतक कि अन्तःकरण शुद्ध न हो जाय; जैसे 'व्रीहीन् अवहन्ति' (धान कूटे) इस शास्त्र-वाक्य-के अनुसार धानपर तबतक मूसलका आघात करना आवश्यक होता है, जबतक कि सारी भूसी अलग न हो जाय ।

तदङ्गानां च ॥ २८ ॥

२८—ब्रह्मज्ञानके हेतुभूत जो श्रवण-मननादि साधन हैं, उनके अङ्गभूत गुरुसेवन, शास्त्र-विचार तथा शम-दमादि साधनोंका भी अन्तःकरणकी शुद्धि होनेतक अनुष्ठान करते रहना चाहिये ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तामैश्वर्यपरां काश्यपः परत्वात् ॥ २९॥

२९—आचार्य कश्यप ऐसा मानते हैं कि बुद्धि जब एकमात्र परमेश्वरका ही आश्रय लेती है, तभी वह मोक्षदायिनी होती है; क्योंकि परमेश्वर सब जीवोंसे परे है। (इनके मतमें परमेश्वर और जीवात्मामें सर्वथा भेद है।)

आत्मैकपरां बादरायणः ॥ ३० ॥

३०—आचार्य बादरायण (वेदव्यास) केवल चिद्घन आत्माका आश्रय लेनेवाली बुद्धिको ही मोक्षदायिनी मानते हैं।* (इनके मतमें एकमात्र विशुद्ध चित्सत्ता ही परमार्थ वस्तु है; परमात्मा और जीवात्माका भेद कल्पित है, वास्तविक नहीं।)

उभयपरां शाण्डिल्यः शब्दोपपत्तिभ्याम् ३१

३१—शाण्डिल्य वेद-वाक्य तथा युक्तिके

---

* आत्मेति तूपगच्छन्ति ग्राहयन्ति चेति।

(ब्र० सू० ४। १। ३)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आधारपर ब्रह्म तथा जीवात्मा दोनोंका आश्रय लेने-वाली बुद्धिको मुक्तिदायिनी स्वीकार करते हैं।*

वैषम्यादसिद्धमिति चेन्नाभिज्ञानवदवैशिष्ट्यात् ॥ ३२ ॥

३२—दोनों (ब्रह्म और जीव) में समानता न होनेके कारण बुद्धि उन दोनोंका ही आश्रय लेगी,

---

* 'सर्वं खल्विदं ब्रह्म तज्जलानिति शान्त उपासीत।.....'एष म आत्माऽन्तर्हृदयेऽणीयान्'..... एतद् ब्रह्मैतमितः प्रेत्याभिसंभवितास्मीति यस्य स्यादद्धा न विचिकित्सास्तीति ह स्माह शाण्डिल्यः शाण्डिल्यः।' (छा० ३ । १४ । १—४)

यह शब्दप्रमाण है। युक्ति यह है कि ब्रह्म परमेश्वर-रूपसे वर्णित है और जीवरूपसे भी। 'यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते ।' (तै० ३ । २ । १) इसमें परमेश्वररूपसे उसका वर्णन हुआ है और 'ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः।' (गीता १५। ७) इत्यादिमें जीवरूपसे ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

यह सिद्ध नहीं होता, यदि ऐसा कहें तो ठीक नहीं; क्योंकि यह वही है, इस प्रत्यभिज्ञा (पहचान) बुद्धिके द्वारा जैसे 'यह' और 'वही'की एकता होती है, उसी प्रकार जो ब्रह्म है, वही जीवरूपमें स्थित है, ऐसी बुद्धि होनेसे दोनोंमें विषमता नहीं रहती। (शाण्डिल्यके मतमें भी जीव और ब्रह्मकी एकता ही है।)

न च क्लिष्टः परःस्यादनन्तरं विशेषात्।३३।

३३—ब्रह्म और जीवकी एकता माननेपर भी जीवोपाधिधारी आत्माके जो क्लेश आदि हैं, वे परमेश्वरका स्पर्श नहीं कर सकते; क्योंकि चिदंश-में अभेद-निर्णयके पश्चात् भी क्लेश आदिका सम्बन्ध जीवात्मासे ही है; और यही परमात्मासे जीवका अन्तर सिद्ध करता है; ऐसा निश्चय हो सकता है।

ऐश्वर्यं तथेति चेन्न स्वाभाव्यात् ॥३४॥

३४—यदि कहें, परमेश्वरमें जैसे क्लेश आदि

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitizaqtion by eGangotri

बाधित होते हैं, उसी प्रकार ऐश्वर्य भी बाधित हो सकता है, तो यह ठीक नहीं है, क्योंकि ऐश्वर्य तो ईश्वरका स्वभाव है (अतः उसका बाध नहीं हो सकता)।

अप्रतिषिद्धं परैश्वर्यं तद्भावाच्च नैवमितरेषाम् ॥ ३५ ॥

३५—श्रुतिमें कहीं भी परमेश्वरके ऐश्वर्यका निषेध नहीं किया गया है। (अपितु उसमें ऐश्वर्यको स्वाभाविक कहा गया है।) इसी प्रकार जीवोंके ब्रह्मभावका प्रतिपादन होनेके कारण उनके लिये भी क्लेश आदिका होना स्वाभाविक नहीं (आगन्तुक ही है)।

सर्वानृते किमिति चेन्नैवं बुद्ध्यानन्त्यात् ३६

३६—सब जीवोंकी क्रमशः मुक्ति होनेपर जब सब प्रकारकी बुद्धियोंका लय हो जाता है, तब परमात्माकी पर-उपाधिके भी बनी रहनेका कोई प्रयोजन न होनेसे उसका भी आत्यन्तिक लय हो

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जायगा; फिर उनमें स्वाभाविक ऐश्वर्य रहकर क्या होगा ? ऐसा कहें तो ठीक नहीं; क्योंकि जीवोपाधिक बुद्धियाँ अनन्त हैं (अतः ऐसा कोई काल ही नहीं है, जब सभी बुद्धियोंका लय हो जाय) ।

प्रकृत्यन्तरालादवैकार्यं चित्सत्त्वेनानुवर्तमानात् ॥ ३७ ॥

३७—(यदि परमेश्वरमें कर्तृत्वरूप ऐश्वर्य मानें तो वह विकारी होगा ! इसके उत्तरमें कहते हैं—) परमेश्वर प्रकृति (मायाशक्ति) को बीचमें डालकर सृष्टि करता है, अतः जड-प्रपञ्चकी उपादानभूत प्रकृतिमें ही विकार है; परमेश्वर तो अविकारी ही है । वह अपनी चित्सत्तासे प्रकृतिमें अनुगत है; इसीसे उसमें कर्तृत्वरूप ऐश्वर्य तो है, परंतु विकृति नहीं है ।

तत्प्रतिष्ठा गृहपीठवत् ॥ ३८ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

३८—(यदि प्रकृति या मायाद्वारा ही जगत्-की सृष्टि होती है, तब तो उसीमें यह जगत् प्रतिष्ठित है; फिर यह कैसे कहा जाता है कि 'तस्मिन् सर्वं प्रतिष्ठिम्'—ब्रह्ममें ही सारा जगत् प्रतिष्ठित है ? इस शङ्काके उत्तरमें कहते हैं—) प्रकृति या मायाका आश्रय भी ब्रह्म ही है, अतः उसमें प्रतिष्ठित जगत्को ब्रह्ममें प्रतिष्ठित माननेमें कोई आपत्ति नहीं है; जैसे घरमें पीढ़ा या चौकी रक्खी है और उसपर कोई मनुष्य बैठा है तो भी उसके लिये यह कहा जाता है कि वह घरमें बैठा है।

मिथोऽपेक्षणादुभयम् ॥ ३९ ॥

३९—सृष्टि-कार्यमें ब्रह्म तथा प्रकृति दोनों एक दूसरेकी अपेक्षा रखते हैं; अतः दोनों ही उसके कारण हैं।

चेत्यचितोर्न तृतीयम् ॥४०॥

४०—चेत्य और चित् (ज्ञेय और ज्ञातारूप

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitizagtion by eGangotri

प्रकृति एवं पुरुष) से भिन्न कोई तीसरा पदार्थ (जगत्में) नहीं है ।

युक्तौ च सम्परायात् ॥ ४१ ॥

४१—प्रकृति और पुरुष (जड और चेतन) अनादि कालसे परस्पर संयुक्त हैं ।*

शक्तित्वान्नानृतं वेद्यम् ॥ ४२ ॥

४२—वेद्य अर्थात् ज्ञेय प्रकृति मायारूप होनेके कारण सर्वथा मिथ्या है, ऐसा नहीं मानना चाहिये; क्योंकि वह ब्रह्मकी शक्ति मानी गयी है ।

तत्परिशुद्धिश्च गम्या लोकवल्लिङ्गेभ्यः ।४३।

४३—भक्तिकी परिशुद्धि (दृढ़ता एवं निर्मलता) का ज्ञान लौकिक प्रीतिकी भाँति बाह्य चिह्नोंसे होता है । (जैसे लोकमें प्रियतमकी चर्चासे प्रियाके पुलक-अश्रुपात आदि होते देख उसकी आन्तरिक

---

* प्रकृतिं पुरुषं चैव विद्ध्यनादी उभावपि ॥
(गीता १३ । १९)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रीति पहचानी जाती है, उसी प्रकार भगवत्कथा-श्रवण, नाम-कीर्तन आदिमें रोमाञ्च, अश्रुपात आदि चिह्न देखकर विशुद्ध एवं दृढ़ भक्तिका अनुमान करना चाहिये ।)

सम्मानबहुमानप्रीतिविरहेतरविचिकित्सा-महिमख्यातितदर्थप्राणस्थानतदीयतासर्वतद्-भावाप्रातिकूल्यादीनि च स्मरणेभ्यो बाहुल्यात् ॥ ४४ ॥

४४—अर्जुनकी भाँति भगवान्‌के प्रति सम्मान-की बुद्धि, इक्ष्वाकुकी भाँति भगवत्सदृश नाम या वर्णके प्रति अधिक आदर (उसके दर्शनसे भगवत्प्रेमका उदय होना), विदुर आदिकी भाँति भगवान् या भगवद्भक्तके दर्शनसे प्रीति, गोपीजनों-की भाँति भगवान्‌के विरहकी अनुभूति, उपमन्यु तथा श्वेतद्वीपवासियोंके समान भगवद्भिन्न वस्तुओं-से स्वभावतः अरुचि होना, भीष्म एवं व्यास

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आदिकी तरह निरन्तर भगवान्‌की महिमाका वर्णन, व्रजवासियों तथा हनुमान्‌जीकी भाँति भगवान्‌के लिये जीवन धारण करना, बलि आदि-की भाँति मैं तथा मेरा सब कुछ भगवान्‌का ही है, यह भाव रखना, प्रह्लादजीकी तरह सबमें भगवद्भाव होना, भीष्म, युधिष्ठिर आदिकी भाँति कभी भगवान्‌के प्रतिकूल आचरण न करना—आदि बहुत-से भक्तिसूचक चिह्न स्मृतियों (इतिहास-पुराणोंके वर्णन) से भी प्रायः लक्षित होते हैं।

द्वेषादयस्तु नैवम् ॥ ४५ ॥

४५—स्वामीके प्रति अनुराग रखनेवाले सेवकोंमें तो स्वामीके अनुग्रहकी न्यूनाधिकता होनेपर उसके प्रति द्वेष तथा ईर्ष्या आदि भाव भी प्रकट होते हैं, क्या ये भी प्रेम या भक्तिके ही चिह्न हैं ? नहीं; भगवान्‌के भक्तोंमें इस प्रकार द्वेष

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आदि नहीं प्रकट होते ।*

यद्वाक्यशेषात् प्रादुर्भावेष्वपि सा ॥ ४६ ॥

४६—भगवान्‌के अवतार-विग्रहोंके प्रति भी जो भक्ति होती है, वह पराभक्ति ही है; गीतामें भगवान्‌का ऐसा ही वाक्यशेष है (पहले देव-भक्तोंको देवताओंकी प्राप्ति बताकर अन्तमें अपने भक्तोंको अपनी प्राप्ति बतायी है—गीता ७ । २३)।

जन्मकर्मविदश्चाजन्मशब्दात् ॥ ४७ ॥

४७—भगवान्‌के जन्म-कर्मका रहस्य जाननेवाले पुरुषका भी जन्म नहीं होता, ऐसा भगवान्‌ने श्रीमुखसे प्रतिपादन किया है । (गीता ४ । ९)

तच्च दिव्यं स्वशक्तिमात्रोद्भवात् ॥ ४८ ॥

४८—भगवान्‌का जन्म और कर्म दिव्य है

---

* प्रमाण यह है—

न क्रोधो न च मात्सर्यं न लोभो नाशुभा मतिः ।
भवन्ति कृतपुण्यानां भक्तानां पुरुषोत्तमे ॥
(महा० अनु० १४० । १३५)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(जीव-शरीरकी भाँति कर्मफलके अधीन तथा पञ्च-भूतोंसे निर्मित नहीं है); क्योंकि वह भगवान्-की योगमाया-शक्तिसे प्रकट हुआ है (अतः अप्राकृत एवं चिन्मय है । अहंकार और फलासक्तिसे रहित होनेके कारण उनका प्रत्येक कर्म भी दिव्य है) ।

मुख्यं तस्य हि कारुण्यम् ॥ ४९ ॥

४९—उनके जन्म-ग्रहणमें जीवोंके प्रति उनकी अहैतुकी कृपा ही मुख्य कारण है ।

प्राणित्वान्न विभूतिषु ॥ ५० ॥

५० ('मनुष्योंमें मैं राजा हूँ ।' (गीता १० । २७) इस भगवद्वचनके अनुसार राजा आदि विभूतियोंको भगवद्रूप कहा गया है, अतः उनके प्रति की हुई भक्ति भी मोक्ष देनेवाली होनी चाहिये; इस शङ्काके उत्तरमें कहते हैं—) विभूतियों-के प्रति की हुई भक्ति पराभक्ति नहीं है (वह पराभक्तिका साधनमात्र हो सकती है); क्योंकि

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वे प्राणधारी जीव हैं । (जीवोपाधिसे रहित परमेश्वरविषयक भक्ति ही पराभक्ति कहलाती है ।)

द्यूतराजसेवयोः प्रतिषेधाच्च ॥ ५१ ॥

५१—धर्मशास्त्रोंमें द्यूतसेवन तथा राजाकी सेवाका निषेध किया है; अतः इससे भी वे पराभक्तिके आश्रय नहीं सिद्ध होते हैं । (यदि वे ईश्वररूपसे उपासनीय होते तो उनके सेवनका निषेध नहीं किया जाता ।)

वासुदेवेऽपीति चेन्नाकारमात्रत्वात् ॥५२॥

५२—यदि कहें, वासुदेवकी भी तो विभूतियोंमें ही गणना है (गीता १० । ३७); अतः राजा आदिकी भाँति वे भी भजनीय नहीं सिद्ध होंगे तो ऐसा मानना ठीक नहीं है; क्योंकि भगवान् वहाँ आकारमात्रसे ही वसुदेवपुत्र एवं मनुष्य हैं, वास्तवमें तो साक्षात् परब्रह्म विष्णु ही हैं ।*

* उनके विषयमें ऐसा ही शास्त्रप्रमाण है—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitizagtion by eGangotri

प्रत्यभिज्ञानाच्च ॥ ५३ ॥

५३—भगवान् वासुदेव (श्रीकृष्ण) की विष्णु-रूपताके विषयमें प्रत्यभिज्ञा (पूर्व अनुभवकी स्मृति) भी उपलब्ध होती है ।*

वृष्णिषु श्रैष्ठ्येन तत् ॥ ५४ ॥

५४—यदुवंशियोंमें वे सबसे श्रेष्ठ हैं, यही बताने-की दृष्टिसे विभूति-वर्णनके प्रसंगमें 'वासुदेव'का नाम भी लिया गया है । (जैसे १२ सूर्योंमें विष्णुको विभूति कहा गया है। (गीता १० । २१),

---

यदोर्वंशं नरः श्रुत्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते ।
यत्रावतीर्णं विष्ण्वाख्यं परं ब्रह्म नराकृति ॥
(विष्णु० ४ । ११ । २)

'कृष्णस्तु भगवान् स्वयम्' (श्रीमद्भा० १ । ३ । २८) इत्यादि ।

* मार्कण्डेयजी युधिष्ठिरसे कहते हैं—'मैंने प्रलयकालमें जिन परमेश्वर बालमुकुन्दका दर्शन किया था, वे ही आपके सम्बन्धी श्रीकृष्ण हैं'—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizaqtion by eGangotri

परंतु वे विभूतिमात्र ही नहीं हैं, साक्षात् परमेश्वर हैं; आदित्योंमें विष्णुनामक आदित्य ही सर्वश्रेष्ठ हैं, इतना ही प्रतिपादन करनेके लिये यहाँ उनका नाम आया है ।)

एवं प्रसिद्धेषु च ॥ ५५ ॥

५५–इसी प्रकार साक्षात् विष्णुरूपसे प्रसिद्ध जो रामभद्र वामन आदि अवतार-विग्रह हैं, उनके प्रति की हुई भक्ति भी मुक्तिदायिनी पराभक्ति ही है, ऐसा जानना चाहिये ।

प्रथम आह्निक सम्पूर्ण

यः स देवो मया दृष्टः पुरा पद्मायतेक्षणः ।
स एव पुरुषव्याघ्रः सम्बन्धी ते जनार्दनः ॥

(महा० वन० १८९ । ५२)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भक्त्या भजनोपसंहाराद्गौण्या परायै-तद्धेतुत्वात् ॥ ५६ ॥

५६—(गीता ९ । १४,२९ आदि श्लोकोंमें*) भक्ति-पदसे भजनका उपसंहार होनेके कारण वहाँ गौणी भक्तिसे ही तात्पर्य है; क्योंकि गौणी भक्ति पराभक्तिकी प्राप्तिमें हेतु है ।

रागार्थप्रकीर्त्तिसाहचर्याच्चेतरेषाम् ॥५७॥

५७—(गीता ११ । ३६ में) कीर्तनसे भगवान्‌के प्रति अनुराग होनेकी बात कही गयी है; अतः जैसे कीर्तन अनुरागमें हेतु होता है, उसी प्रकार उसके साहचर्यसे भगवन्नाम-श्रवण-वन्दन आदि जो अन्य भजन-प्रकार हैं, वे भी

---

* सततं कीर्तयन्तो मां यतन्तश्च दृढव्रताः ।
नमस्यन्तश्च मां भक्त्या नित्ययुक्ता उपासते ॥
ये भजन्ति तु मां भक्त्या मयि ते तेषु चाप्यहम् ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अनुरागरूप पराभक्तिकी प्राप्ति करानेवाले हैं; ऐसा मानना चाहिये ।

अन्तराले तु शेषाः स्युरुपास्यादौ च काण्डत्वात् ॥ ५८ ॥

५८—(गीता ९ । १३ से लेकर ९ । २९ तकके) बीचमें (९ वें अध्यायके १४, १५, २२, २५, २६, २७, २८ इन श्लोकोंमें) जो कीर्तन, भजनार्थ यतन, व्रत, नमस्कार, ज्ञानयज्ञ, ध्यान, याग (पूजा), दान, सर्वकर्मार्पण आदि शेष गौणी भक्तियोंका श्रवण होता है, वे सब-की-सब पराभक्तिकी ही अङ्गभूत हैं । केवल ये ही नहीं, 'मनो ब्रह्मेत्युपासीत' इत्यादि वचनोंद्वारा उपासना आदिमें गृहीत जो साधन हैं, वे भी पराभक्तिके अङ्ग हैं; क्योंकि सम्पूर्ण ब्रह्मकाण्ड भक्तिकाण्ड (भक्ति और उसके साधनोंका प्रतिपादक) रूप ही है ।

तास्यः पाविश्यमुपक्रमात् ॥ ५९ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

५९—इन गौणी भक्तियोंद्वारा पवित्रता (पापक्षय-पूर्वक अन्तःकरणकी शुद्धि) होती है; क्योंकि नवें अध्यायके प्रारम्भ (गीता ९ । २) में 'पवित्र-मिदमुत्तमम्' कहकर इन सबको पवित्र बताया गया है ।

तासु प्रधानयोगात् फलाधिक्यमेके॥६०॥

६०—पूर्वोक्त कीर्तन आदि साधनोंमें जो प्रधान भक्तिका योग बताया गया है, उससे सिद्ध होता है कि पराभक्तिसे युक्त मनुष्य यदि नमस्कार-कीर्तन आदि करे तो अधिक फलकी प्राप्ति होती है—ऐसा किन्हीं-किन्हीं आचार्योंका मत है ।

नाम्नेति जैमिनिः सम्भवात् ॥ ६१ ॥

६१—आचार्य जैमिनिका मत है कि 'भक्ति' का नामतः प्रयोग होनेसे समानाधिकरण अन्वय सम्भव है, इसलिये भक्तिपूर्वक कीर्तनसे पराभक्ति प्राप्त करे; इतना ही अभिप्राय है, उससे अधिक फलकी कल्पना नहीं करनी चाहिये ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अत्राङ्गप्रयोगाणां यथाकालसम्भवो गृहादिवत् ॥ ६२ ॥

६२—यहाँ पराभक्तिके साधनभूत कीर्तन-श्रवण आदि अनुष्ठान यथासमय हो सकता है; जैसे गृह आदि निर्माण करनेके लिये यथासमय तृण, काष्ठ आदिका संग्रह किया जाता है। (पहले तृण लाया जाय या काष्ठ आदि, इसका आग्रह नहीं होता; उसी प्रकार पहले कीर्तन हो या श्रवण आदि इसका आग्रह न रखकर जब जो साधन सम्भव हो, करना चाहिये।)

ईश्वरतुष्टेरेकोऽपि बली ॥ ६३ ॥

६३—पूर्वोक्त कीर्तन आदि साधनोंमें एकका भी विशेषरूपसे अनुष्ठान करनेपर वही परमेश्वरको संतुष्ट करके बलवान् (पराभक्तिकी प्राप्ति करानेमें समर्थ) हो जाता है।

अबन्धोऽर्पणस्य मुखम् ॥ ६४ ॥

६४—भगवान्‌को समर्पित किया हुआ कर्म

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अपना शुभाशुभ फल देनेमें असमर्थ होनेके कारण बन्धनकारक नहीं होता । उसकी वह अबन्धकता ही पराभक्तिकी प्राप्तिका द्वार है ।

ध्याननियमस्तु दृष्टसौकर्यात् ॥ ६५ ॥

६५—ध्यानका नियम इसलिये बताया जाता है कि उसके द्वारा ध्येयके स्वरूपमें चित्त भलीभाँति लगे; यही ध्यानका दृष्ट फल है और इसीकी सुविधाके हेतु उसका नियम बताना आवश्यक है ।

तद्यजिः पूजायामितरेषां नैवम् ॥ ६६ ॥

६६—"(गीता ९ । २५) 'यान्ति मद्याजिनोऽपि माम्' इस वाक्यमें जो 'यज' धातुका प्रयोग है, वह अग्निष्टोम आदि यज्ञोंका वाचक है या अन्य किसी अर्थका ?" इस प्रश्नका उत्तर देते हुए कहते हैं, वहाँ 'यज' धातु पूजा-अर्थमें है । इतर यज्ञ-यागादिकोंमें 'यज' धातु पूजाके अर्थमें नहीं प्रयुक्त हुआ है ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पादोदकं तु पाद्यमव्याप्तेः ॥ ६७ ॥

६७—'पादोदक' शब्द पाद्य (पाँव पखारनेके उद्देश्यसे भगवान्‌को अर्पित किये जानेवाले जल) के अर्थमें प्रयुक्त होता है; 'साक्षात् चरणोंका जल' अर्थ करनेपर अव्याप्तिदोष होगा; क्योंकि साक्षात् भगवच्चरणोंका जल सुलभ नहीं है ।

स्वयमर्पितं ग्राह्यमविशेषात् ॥ ६८ ॥

६८—'भगवान्‌को निवेदित की हुई वस्तु वैष्णवको देनी चाहिये' यह नियम है । प्रत्येक वैष्णव भक्तको अपने द्वारा भगवान्‌को निवेदित किये हुए नैवेद्य आदिका प्रसाद ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि विष्णुभक्त होनेसे वह भी उसका अन्य वैष्णवोंके समान ही अधिकारी है ।

निमित्तगुणाव्यपेक्षणादपराधेषु व्यवस्था ६९

६९—पूजाके जो अनेक अपराध बताये गये

---

१. पादोदकं भगवतः प्रपुनाति सद्यः ।
(नृ० पु० ५९ । ४६)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitization by eGangotri

हैं, उनमें निमित्त, गुण और अनपेक्षाके अनुसार व्यवस्था होती है। (कहीं किसी निमित्तसे, कहीं गुण (स्वभाव) से और कहीं अनिच्छासे अपराध बनते हैं; इनमें अनिच्छापराधसे निमित्तापराध और उससे भी गुणापराध भारी है।)

पत्रादेर्दानमन्यथा हि वैशिष्ट्यम् ।।७०।।

७०—(गीता ९ । २६) के अनुसार पत्र-पुष्प आदिसे उपलक्षित सब प्रकारका दान, जो भगवान्‌के उद्देश्यसे किया गया हो, पराभक्तिका अङ्ग है। यदि ऐसा न माने तो केवल पत्र, पुष्प, फल और जल—इन चार वस्तुओंसे विशिष्ट दान ही भक्तिका अङ्ग होगा।

सुकृतजत्वात् परहेतुभावाच्च क्रियासु श्रेयस्यः ७१

७१—पूर्वोक्त गौणी भक्तियाँ पूर्व-पुण्यके फल-रूपसे प्राप्त होती हैं और पराभक्तिकी प्राप्तिमें सहायक होती हैं; इसलिये वे समस्त क्रियाओंमें कल्याणकारिणी होती हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गौणं त्रैविध्यमितरेण स्तुत्यर्थत्वात् साहचर्यम् ॥ ७२ ॥

७२—गौण भक्तिके तीन भेद हैं——आर्त-भक्ति, जिज्ञासा-भक्ति, अर्थार्थिता-भक्ति । ज्ञान-भक्ति तो पराभक्तिरूप है; उसके साथ पूर्वोक्त तीन भक्तियोंका उल्लेख उनकी स्तुति (प्रशंसा) के लिये किया गया है ।

बहिरन्तरस्थमुभयमवेष्टिसववत् ॥ ७३ ॥

७३—स्मरण-कीर्तन आदि साधन बाहर रहकर स्वतन्त्र और पराभक्तिके साधनरूपसे भीतर रहकर परतन्त्र भी होते हैं । इस प्रकार वे उभयरूप हैं । ठीक उसी तरह, जैसे अवेष्टि-याग तथा बृहस्पति-सव कहीं राजसूय और वाजपेयके अङ्गरूपमें भी उपलब्ध होते हैं तथा कहीं प्रधानरूपमें भी रहते हैं । ('यज्ञमें जो प्रमादवश त्रुटि रह जाती है, वह विष्णुके स्मरणसे ही पूर्ण होती है' इत्यादि वचनोंद्वारा स्मरण-कीर्तन आदिकी प्रधानता ही सूचित होती है ।)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

स्मृतिकीर्त्योः कथादेश्चार्तौ प्रायश्चित्त-भावात् ॥ ७४ ॥

७४—स्मरण, कीर्तन, कथा-श्रवण, नमस्कार आदि साधन आर्त-भक्तिमें प्रायश्चित्त-रूपसे कहे गये हैं ।*

भूयसामनुष्ठितिरिति चेदाप्रयाणमुपसंहारान्महत्स्वपि ॥ ७५ ॥

७५—यदि कहें, 'आर्त-भक्तके द्वारा जो अपने बड़े-बड़े पापोंके नाशके लिये बहुत-से क्लेशसाध्य श्रेष्ठ कर्मोंका अनुष्ठान नहीं हो रहा है, तब तो कीर्तन आदि लघु साधनोंद्वारा उसके लघु पापों-का ही क्षय हो सकता है, बड़े भारी पातकोंका नहीं ।' तो ऐसा कहना ठीक नहीं; क्योंकि उसके

---

* प्रायश्चित्तान्यशेषाणि तपःकर्मात्मकानि वै ।
यानि तेषामशेषाणां कृष्णानुस्मरणं परम् ॥
(वि० पु० २ । ६ । ३७)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लिये आमरण भगवत्स्मरण*की विधिका उपसंहार देखा जाता है । अतः बड़े भारी पातकोंको दूर करनेमें भी वह स्मरण-कीर्तन आदि समर्थ है ।

लघ्वपि भक्ताधिकारे महत्क्षेपक्रमपरसर्व-हानात् ॥ ७६ ॥

७६—एक बारका किया हुआ स्मरण-कीर्तन आदि लघु होकर भी बड़े-बड़े पातकोंको नष्ट करनेमें समर्थ होता है; क्योंकि भक्तके लिये भगवत्स्मरण या भगवच्छरणागतिके सिवा, अन्य सब प्रायश्चित्तोंके त्यागकी विधि है ।†

तत्स्यानत्वादनन्यधर्मः स्खले बालीवत् ।७७।

---

* तस्मादहर्निशं विष्णुं संस्मरन् पुरुषो मुने ।
न याति नरकं मर्त्यः संक्षीणाखिलपातकः ॥
(वि० पु० २ । ६ । ४३)

† सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥
(गीता १८ । ६६)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitization by eGangotri

७७—स्मरण-कीर्तन आदिको पापके प्रायश्चित्त-भूत कृच्छ्रचान्द्रायणादि व्रतके स्थानमें प्रतिष्ठित किया गया है;अतः उसके द्वारा पापोंका नाश तो होगा ही; परंतु अन्य प्रायश्चित्तोंमें जो मुण्डन आदि करानेकी विधि है, उन सब इतर धर्मोंका पालन कीर्तनादिपरायण भक्तके लिये आवश्यक नहीं रह जाता है; जैसे खलिहानके मेहको यज्ञयूपके रूपमें व्यवहारमें लानेपर उसमें पशुको बाँधा तो जाता है, परंतु यूपके लिये आवश्यक मानी जाने-वाली अन्य विधियोंका अनुष्ठान वहाँ आवश्यक नहीं समझा जाता है।

आनिन्द्ययोन्यधिक्रियते पारम्पर्यात् सामान्यवत् ॥ ७८ ॥

७८—भक्तिमें उच्च जातिसे लेकर चाण्डालादि नीच जातितकके मनुष्योंका समान रूपसे अधिकार है; ठीक उसी तरह जैसे अहिंसा, सत्य, अस्तेय

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitization by eGangotri

आदि सामान्य धर्मोंके ज्ञान और अनुष्ठानमें सबका समान अधिकार है; गुरु तथा शास्त्रोंके उपदेशकी परम्परासे यही बात सिद्ध होती है।

अतो ह्यविपक्वभावानामपि तल्लोके ॥७९॥

७९—अतः इस लोकमें जिनकी पराभक्ति परिपक्व (सिद्ध) नहीं हुई है, उनके द्वारा भी भगवान्के (श्वेतद्वीप आदि) लोकमें रहकर भक्ति-साधनका अनुष्ठान किया जाता है, यह बात इतिहास-पुराणोंमें सिद्ध होती है।*

क्रमैकगत्युपपत्तेस्तु ॥ ८० ॥

८०—ऐसा माननेसे ही क्रम-गति और एक गतिका प्रतिपादन करनेवाले वचनोंकी संगति होती

---

* क्षीरोदधेरुत्तरतः श्वेतद्वीपो महाप्रभः।
तत्र नारायणपरा मानवाश्चन्द्रवर्चसः॥
एकान्तभावोपगतास्ते भक्ताः पुरुषोत्तमे।
(महाभारत शान्ति० मोक्ष० ३३८ वाँ अध्याय)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitization by eGangotri

है। (अर्थात् जिनकी भक्ति परिपक्व नहीं है, वे क्रमशः भिन्न-भिन्न लोकोंमें होते हुए अन्तमें परिपक्वावस्थामें पहुँचनेपर भगवान्‌को प्राप्त होते हैं और जो यहीं पराभक्तिमें परिपक्व हो चुके हैं, वे अन्य किसी गतिको न प्राप्त होकर एकमात्र भगवान्‌को ही प्राप्त करते हैं; ऐसा सिद्धान्त स्वीकार करनेपर ही ये उभयविध गतिके प्रतिपादक वचन संगत होते हैं।)

उत्क्रान्तिस्मृतिवाक्यशेषाच्च ॥ ८१ ॥

८१—गीता अध्याय ८ श्लोक १० से १३ तक जो उत्क्रान्ति (देहत्याग) के पश्चात् प्राप्त होनेवाली परमगतिका वर्णन आया है, उसके वाक्यशेषमें (अर्थात् ८। २४ में) क्रममुक्तिका प्रतिपादन किया गया है; इससे भी यही सिद्ध होता है कि परिपक्व भक्तिवाले पुरुषको अनन्य गति (केवल भगवान्) की प्राप्ति होती है और

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitizaqtion by eGangotri

अविपक्व भक्तिवालेको क्रममुक्ति मिलती है।

महापातकिनां त्वार्तौ ॥ ८२ ॥

८२—(यदि चाण्डाल-योनितकके मनुष्योंका भक्तिमें अधिकार है, तब तो महापातकी मनुष्यों-का भी उसमें अधिकार हो सकता है। इसके उत्तरमें कहते हैं—) जिनके द्वारा पतनके हेतुभूत महापातक बन गये हैं, ऐसे लोगोंका केवल आर्त-भक्तिमें ही अधिकार है और किसीमें नहीं। (उसके द्वारा पापनिवृत्ति हो जानेपर सब प्रकारकी भक्तिमें अधिकार हो जाता है।)

सैकान्तभावो गीतार्थप्रत्यभिज्ञानात्॥८३॥

८३—भगवान्‌के प्रति एकान्तभाव (अनन्य प्रेम) ही वह पराभक्ति है, यह बात गीताके ९।२२; ६। ३०; ९। ३४; ११। ५५; १२। ६ आदि वचनोंके अर्थपर विचार करने-से सिद्ध होती है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

परां कृत्वैव सर्वेषां तथा ह्याह ॥ ८४ ॥

८४—पराभक्तिकी प्राप्ति करके ही कीर्तन आदि गौण भक्ति-साधनोंका मुक्तिमें उपयोग होता है; अर्थात् वे मुक्तिके साक्षात् साधन नहीं हैं, पराभक्तिको उपलब्ध कराकर ही उसके द्वारा मोक्ष-प्राप्तिमें कारण बनते हैं। ऐसा ही भगवान् श्रीमुखसे कहते हैं।*

द्वितीय आह्निक सम्पूर्ण

द्वितीय अध्याय सम्पूर्ण

* गीतामें भगवान्का वचन है—

य इमं परमं गुह्यं मद्भक्तेष्वभिधास्यति।
भक्तिं मयि परां कृत्वा मामेवैष्यत्यसंशयः॥

(१८।६८)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तृतीय अध्याय

प्रथम आह्निक

भजनीयेनाद्वितीयमिदं कृत्स्नस्य तत्स्वरूपत्वात् ॥ ८५ ॥

८५—यह सम्पूर्ण विश्व भजनीय— भगवान्‌से अभिन्न है; क्योंकि सब कुछ उनका ही स्वरूप है।

तच्छक्तिर्माया जडसामान्यात् ॥ ८६ ॥

८६—भगवान्‌की ऐश्वर्यशक्तिका नाम माया है। वह माया भी भगवान्‌से भिन्न नहीं है; क्योंकि जैसे अन्य जड-तत्त्व भगवत्स्वरूप हैं, वैसे यह माया भी है।

व्यापकत्वाद्व्याप्यानाम् ॥ ८७ ॥

८७—भगवान् सच्चिदानन्दस्वरूपसे सबमें

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitization by eGangotri

व्यापक हैं; व्याप्य वस्तुएँ व्यापकका स्वरूप होती हैं; अतः कुछ भी भगवान्‌से भिन्न नहीं है।

न प्राणिबुद्धिभ्योऽसम्भवात् ॥ ८८ ॥

८८—(इस संसारकी सृष्टि बुद्धिपूर्वक हुई है—सोच-समझकर की गयी है; यह बात इसकी सूक्ष्मता, सृष्टिक्रम, उपयोगिता एवं व्यवस्थाको देखते हुए प्रतीत होती है ; तो क्या किसी जीव-की बुद्धिसे इस जगत्‌का निर्माण हुआ है ? इस प्रश्नका उत्तर देते हुए सूत्रकार कहते हैं—) नहीं, प्राणियोंकी बुद्धिसे जगत्‌की सृष्टि नहीं हुई है; क्योंकि जीवकी स्वल्प बुद्धिके लिये यह असम्भव है (अतः ईश्वर ही इसके स्रष्टा हैं)।

निर्मायोच्चावचं श्रुतीश्च निर्मिमीते पितृवत्८९

८९—ऊँच-नीच अथवा स्थूल-सूक्ष्म भेदवाले समस्त दृश्य-प्रपञ्च एवं प्राणिवर्गको उत्पन्न करके भगवान् उन्हें हिताहितका परिज्ञान करानेके लिये

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitization by eGangotri

वेदोंका भी निर्माण (प्राकट्य) करते हैं। ठीक वैसे ही, जैसे पिता पुत्रोंको उत्पन्न करके उन्हें कर्तव्य-अकर्तव्यका ज्ञान करानेके लिये शिक्षाकी व्यवस्था करता है।

मिश्रोपदेशान्नेति चेन्न स्वल्पत्वात् ॥९०॥

९०—यदि कहें, 'वेदमें धर्ममय यज्ञ-यागादिके साथ कहीं-कहीं हिंसात्मक यागोंका भी उपदेश देखा जाता है; अतः अधर्ममिश्रित धर्मका उपदेश देनेके कारण ईश्वर पिताके समान हितकारी नहीं हैं' तो यह धारणा ठीक नहीं है; क्योंकि ऐसी बातें बहुत थोड़ी हैं और वह भी हिंसकोंकी बढ़ी हुई हिंसावृत्तिको उन-उन यज्ञोंमें ही सीमित करके धीरे-धीरे कम करनेके लिये ही वैसी बातें कही गयी हैं। (वास्तवमें तो हिंसाका निषेध ही वेदका अभीष्ट मत है।) *

---

* वेदका उपदेश है—'मा हिंस्यात् सर्वा भूतानि' —किसी भी प्राणीकी हिंसा न करे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitizagtion by eGangotri

फलमत्स्माद्धादरायणो दृष्टत्वात् ॥९१ ॥

९१—कर्मोंका फल ईश्वरसे ही प्राप्त होता है स्वतः नहीं; क्योंकि लोकमें ऐसा ही देखा गया है। (जैसे कोई अपने कार्यद्वारा राजा आदिको संतुष्ट करता है तो पुरस्कार पाता है और दुर्व्यवहारसे उसे रुष्ट करता है तो दण्डका भागी होता है; इसी प्रकार ईश्वर ही शुभाशुभ कर्मोंका सुख-दुःखरूप फल देते हैं।) यह बात भगवान् वेदव्यासने (उत्तर-मीमांसा—ब्रह्मसूत्र १।१।२ में) कही है।

व्युत्क्रमादप्ययस्तथा दृष्टम् ॥ ९२ ॥

९२—विपरीत क्रमसे भूतोंका अपने कारणमें लय होता है, ऐसा ही देखा गया है। (घट फूटनेपर मिट्टीमें लीन होता है; इसी प्रकार प्रत्येक व्याप्य वस्तु अपनेमें व्यापक कारण-तत्त्वमें विलीन होती है; यथा पृथ्वीका जलमें, जलका अग्निमें,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अग्निका वायुमें और वायुका आकाशमें लय होता है।)

प्रथम आह्निक सम्पूर्ण

द्वितीय आह्निक

तदैक्यं नानात्वैकत्वमुपाधियोगहानादादित्यवत् ॥ ९३ ॥

९३—जीव और ईश्वरमें एकता है—दोनों एक हैं; उपाधिके संयोगसे उनमें नानात्वकी प्रतीति होती है और उपाधि भङ्ग होनेपर एकत्वका बोध स्पष्ट हो जाता है। ठीक उसी तरह, जैसे एक ही सूर्य जलसे भरे हुए भिन्न-भिन्न पात्रोंमें पृथक्-पृथक् प्रतिबिम्बित होनेपर अनेक-सा प्रतीत होता है; परंतु जलपात्ररूपी उपाधिके न रहनेपर वह पुनः एक ही रह जाता है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पृथगिति चेन्न परेणासम्बन्धात् प्रकाशानाम् ॥ ९४ ॥

९४—यदि कहें, जीवोंमें बद्ध-मुक्त आदिका भेद दिखायी देनेके कारण यह सिद्ध है कि जीव ईश्वरसे सर्वथा भिन्न हैं, तो यह ठीक नहीं; क्योंकि स्वयंप्रकाश परमात्माके साथ उन्हींके प्रकाश-स्वरूप जीवोंका 'द्रष्टा-दृश्यके रूपमें' सम्बन्ध नहीं हो सकता। (अतः चैतन्य-प्रकाशरूपसे सभी जीव ईश्वरसे अभिन्न हैं। बद्ध-मुक्त आदिकी कल्पना करनेवाली तो बुद्धि है जो अज्ञानवश ऐसी कल्पना कर लेती है।)

न विकारिणस्तु करणविकारात् ॥ ९५ ॥

९५—जीवोंमें ज्ञान, सुख, दुःख, इच्छा आदि गुण या विकार होनेके कारण उन्हें विकारी कह सकते हैं, फिर अविकारी परमात्मासे उनकी एकता कैसी ? इसके उत्तरमें कहते हैं; जीवात्मा विकारी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नहीं है; क्योंकि सुख-दुःख आदि विकार तो अन्तःकरणसे सम्बन्ध रखते हैं, आत्मासे नहीं ।

अनन्यभक्त्या तद्बुद्धिर्बुद्धिलयादत्यन्तम्९६

९६—अनन्य भक्तिके द्वारा बुद्धिका आत्यन्तिक लय होनेसे परमात्माका साक्षात्काररूप बोध (या मोक्ष) प्राप्त होता है ।

आयुश्चिरमितरेषां तु हानिरनास्पदत्वात्९७

९७—पराभक्ति सिद्ध होनेपर भक्तको भगवत्प्राप्ति या मुक्तिमें तभीतक विलम्ब है अथवा तभीतक वह जीवन्मुक्तावस्थामें रहता है, जबतक उसकी आयु (प्रारब्ध) शेष है; क्रियमाण और सञ्चित आदिके रूपमें जो अन्य शुभाशुभ कर्म हैं, जिनके कारण शरीर धारण करना पड़ता है, उन सबका लय हो जाता है; क्योंकि पराभक्तिसे जीवनके अदृष्टमात्रका लय होकर जब बुद्धिका भी आत्यन्तिक लय हो जाता है, तब कर्मफल-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भोगका कोई आधार ही नहीं रह जाता है।

संसृतिरेषामभक्तिः स्यान्नाज्ञानात् कारणासिद्धेः ॥ ९८ ॥

९८—जीवका संसारबन्धन भक्ति न होनेके कारण ही है (भगवान्‌की मायासे ही जीव बन्धनमें बँधे हैं, भक्त पुरुष ही उस मायाको जीतकर बन्धन-मुक्त हो सकते हैं; अतः जबतक भक्तिका उदय नहीं होता, तभीतक बन्धन है)। अज्ञानसे जीव संसार-बन्धनमें पड़ा है, यह धारणा ठीक नहीं है; क्योंकि अज्ञानरूप कारणका अस्तित्व ही सिद्ध-नहीं होता है। (ज्ञानका सर्वथा अभाव किसी-को नहीं होता है; कुछ-न-कुछ ज्ञान सभी जीव-को रहता है, अतः बन्धनका कारण अज्ञान है—यह मान्यता भ्रमपूर्ण है।)

त्रीण्येषां नेत्राणि शब्दलिङ्गाक्षभेदाद्रुद्रवत् ९९

९९—पदार्थ या वस्तु-तत्त्वको समझनेके लिये

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

भगवान् शङ्करकी भाँति जीवोंके तीन भिन्न-भिन्न नेत्र (प्रमाण या साधन) हैं, शब्द (वेदादि शास्त्र एवं आप्तवाक्य), लिङ्ग (अनुमान) और प्रत्यक्ष।

आविस्तिरोभावा विकाराः स्युः क्रियाफल-संयोगात् ॥ १०० ॥

१००—उत्पत्ति-विनाश आदि जो छः भाव-विकार हैं, वे आविर्भाव-तिरोभावरूप ही हैं—किसी स्थान या कालविशेषमें एक वस्तुका प्रकट होना और उसका छिप जाना ही उन विकारों-का स्वरूप है; क्योंकि उनके द्वारा क्रियाफलका संयोगमात्र होता है, किसी नूतन वस्तुकी उत्पत्ति नहीं। उत्पत्ति-क्रियाका फल है प्रकट होना, विनाशका फल है अदृश्य होना; इन क्रिया-फलों-का स्थान या कालविशेषसे जो संयोग होता है, उसीको उत्पत्ति या विनाश कहते हैं। इसी प्रकार वृद्धि-क्षय आदि विकार भी अवस्था-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitizagtion by eGangotri

विशेषके प्रादुर्भाव और तिरोभावके ही सूचक हैं। (पराभक्तिसे तत्त्वज्ञानका उदय होनेपर विकार-बुद्धिका लय हो जाता है और सर्वत्र परमात्माका साक्षात्कार होने लगता है; अतः भक्तिका ही आश्रय लेना चाहिये।)

द्वितीय आह्निक सम्पूर्ण

तृतीय अध्याय सम्पूर्ण

शाण्डिल्य-भक्ति-सूत्र सम्पूर्ण

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्रीहरिः

गीताप्रेस, गोरखपुरकी कुछ पुस्तकें

श्रीमद्भगवद्गीता

गीता-तत्त्वविवेचनी ४.००
गीता-शांकरभाष्य २.७५
गीता-रामानुजभाष्य २.५०
गीता बड़ी पदच्छेद, अन्वय, मोटा टाइप १.२५
गीता प्रत्येक अध्यायके माहात्म्यसहित अ० .८७
सजिल्द १.२५
गीता मझोली पदच्छेद अन्वय अजिल्द .७०
सजिल्द १.००
गीता (गुटका) १.२५ वाली-की ठीक नकल .५०
गीता मोटे अक्षरवाली .५०
सजिल्द .८७
गीता मूल मोटा टाइप .३१
सजिल्द .५६
गीता केवल भाषा .२५
गीता-पञ्चरत्न .२०
गीता छोटी भाषाटीका .१६
सजिल्द .२८
गीता मूल विष्णुसहस्रनाम-सहित .२०
गीता तावीजी .१२
गीता मूल विष्णुसहस्र-नाम ... .१०
सजिल्द .१६
गीता-पञ्चाङ्ग .४५
गीता-डायरी सन् १९६० .६२
सजिल्द .७५

उपनिषद् (शांकरभाष्य)

ईशावास्य सानुवाद .२०
केन ,, .५०
कठ ,, .५६
मुण्डक ,, .४५
प्रश्न ,, .४५
उपनिषद् खण्ड १— २.६२
माण्डूक्य सानुवाद १.००
ऐतरेय ,, .३७
तैत्तिरीय ,, .८१
उपनिषद् खण्ड २— २.७०
बृहदारण्यकोपनिषद् ५.५०
छान्दोग्य सानुवाद ३.७५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्वेताश्वतर सानुवाद .८७
ईशादि नौ उपनिषद् अन्वय हिंदी-व्याख्यासहित २.००
ईशावास्य " .०६
वेदान्तदर्शन सानुवाद २.००
पातञ्जलयोगदर्शन सटीक.७५
सजिल्द १.००
पातञ्जलयोगप्रदीप मू० ६.००
लघुसिद्धान्तकौमुदी .७५

श्रीमन्महाभारतम्-मूल

[प्रथम भाग] (आदि, सभा, वनपर्व) मूल्य ६.००
[द्वितीय भाग] (विराट, उद्योग, भीष्म, द्रोणपर्व) मूल्य ... ६.००
[तृतीय भाग] (कर्ण, शल्य, सौप्तिक, स्त्री, शान्तिपर्व) ६.
[चतुर्थ भाग] (अनु० आश्व० आश्र० मौ० महाप्र० स्वर्गा० पर्व) ४.५०

श्रीमद्भागवत

श्रीशुक-सुधासागर २०.००
भागवत महापुराण सटीक १५.००
भागवत सुधासागर ८.५०
मूल-मोटा टाइप ६.००
मूल-गुटका ३.००
प्रेम-सुधासागर ३.५०
श्रीभागवतामृत १.७५
एकादश स्कन्ध १.००
सजिल्द १.३७
श्रीविष्णुपुराण सटीक ४.००
अध्यात्मरामायण सटीक ३.००

श्रीरामचरितमानस

बृहदाकार सटीक १५.००
मोटा टाइप-सटीक ७.५०
मझला साइज सटीक ३.५०
मोटा टाइप-मूल ४.००
पाठभेदसहित-मूल ३.००
मझला साइज मूल २.००
गुटका-मूल सजिल्द .७५
बालकाण्ड-मूल .६२
" सटीक १.१२
अयोध्याकाण्ड-मूल .५०
" सटीक .८१
अरण्यकाण्ड-मूल .२०
" सटीक .२५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

किष्किन्धाकाण्ड-मूल	.१२
” सटीक	.१२
सुन्दरकाण्ड सटीक	.२५
लङ्काकाण्ड-मूल	.२५
” सटीक	.५०
उत्तरकाण्ड-मूल	.२५
” सटीक	.५०
गीता-भवन-चित्र-दर्शन	२.२५
मानस-रहस्य अजिल्द	१.२५
सजिल्द	१.६२
मानस-शंका-समाधान	.५०
विनय-पत्रिका-सटीक	१.००
सजिल्द	१.३७
गीतावली-सटीक	१.००
सजिल्द	१.३७
कवितावली-सटीक	.५६
दोहावली-सटीक	.५०
ईश्वरकी सत्ता और महत्ता	१.२५
सजिल्द	१.६२
सूर-विनय-पत्रिका	.८७
सजिल्द	१.२५
सूर-रामचरितावली	.७०
सजिल्द	१.०६
श्रीकृष्ण-बाल-माधुरी	.८७
सजिल्द	१.२५
श्रीकृष्ण-माधुरी	१.००
सजिल्द	१.३७
अनुराग-पदावली	१.००
सजिल्द	१.३७
शरणागति-रहस्य	.८७
व्रतपरिचय	१.७५
सजिल्द	२.१२
प्रेम-योग	१.५०
श्रीतुकाराम-चरित्र	१.३७
सजिल्द	१.७५
मानसिक दक्षता	१.००
सजिल्द	१.५०
श्रीगोविन्दवैभवम्	१.००
सजिल्द	१.३७
महत्त्वपूर्ण शिक्षा	१.००
सजिल्द	१.३७
परम साधन	१.००
सजिल्द	१.३७
मनुष्य-जीवनकी सफलता	१.००
सजिल्द	१.३७
विष्णुसहस्रनाम	.८७

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दुर्गासप्तशती सटीक .७५
सजिल्द १.००
दुर्गासप्तशती मूल मो. टा. १.००
सजिल्द १.३७
दुर्गासप्तशती-मूल .५०
सजिल्द .७५
आनन्दमय जीवन .८१
स्वर्ण-पथ .७५
सत्सङ्गके बिखरे मोती .७५
एक महात्माका प्रसाद .७५

तत्त्व-चिन्तामणि (बड़ा)

भाग १ अजिल्द .६२
सजिल्द १.००
" २ अजिल्द .८७
सजिल्द १.२५
" ३ अजिल्द .७०
सजिल्द १.०६
" ४ अजिल्द .८१
सजिल्द १.२०
" ५ अजिल्द .८१
सजिल्द १.२०
" ६ अजिल्द १.००
सजिल्द १.३७
भाग ७ अजिल्द १.१२
सजिल्द १.५०

तत्त्व-चिन्तामणि (गुटका)

भाग १ अजिल्द .३१
सजिल्द .५०
" २ अजिल्द .३७
सजिल्द .५६
" ३ अजिल्द .३१
सजिल्द .५०
" ४ अजिल्द .३७
सजिल्द .६२
" ५ अजिल्द .३७
सजिल्द .५६

श्रीचैतन्यचरितावली—

खण्ड १ .८७ सजिल्द १.२५
" २ १.१२ " १.५०
" ३ १.०० " १.३७
" ४ .६२ " १.००
" ५ .७५ " १.१२

संत-वाणी (ढाई हजार अनमोल बोल) .६२
सजिल्द .८७
सूक्ति-सुधाकर .६२ स० १.००

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विदुरनीति	.५६
स्तोत्ररत्नावली	.५०
सजिल्द	.८७
सत्सङ्ग-सुधा	.५०
सुखी जीवन	.५०

भगवच्चर्चा

भाग १	.५०	सजिल्द	.८७
,, २	.५०	,,	.८७
,, ३	.७५	,,	१.१२
,, ४	.८१	,,	१.२०
,, ५	.७५	,,	१.१२
,, ६	.७५	,,	१.१२

श्रीभीष्मपितामह	.४५
सती द्रौपदी	.५०
वल्लभाचार्य नाटक	.५०
नित्यकर्मप्रयोग	.४५
जीवनका कर्तव्य	.४५
भक्त-भारती	.४५
भक्त नरसिंह मेहता	.३७
रामायणके कुछ आदर्श पात्र	.३७
उपनिषदोंके १४ रत्न	.३७

लोक-परलोकका सुधार

(कामके पत्र) भाग १	३७
(कामके पत्र) भाग २	.३७
,, ,, ३	.५०
,, ,, ४	.५०
,, ,, ५	.५०
पढ़ो, समझो और करो	.३७
बड़ोंके जीवनसे शिक्षा	.३७
नारी-शिक्षा	.३७
स्त्रियोंके लिये कर्तव्य-शिक्षा	.३७
पिताकी सीख	.३७
तत्त्व-विचार	.३७
रामाज्ञा-प्रश्न	.३७
चोखी कहानियाँ	.३१
उपयोगी कहानियाँ	.३१
प्रेम-दर्शन	.३१
विवेक-चूडामणि	.३१
श्रीकृष्ण-गीतावली	.३१
भवरोगकी रामबाण दवा	३१

भक्त-चरित-माला

भक्त बालक	.३१
भक्त नारी	.३१
भक्त-पञ्चरत्न	.३१
आदर्श भक्त	.३१
भक्त-चन्द्रिका	.३१

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भक्त सप्तरत्न .३१
भक्त कुसुम .३१
प्रेमी भक्त .३१
प्राचीन भक्त .५०
भक्त-सरोज .३७
भक्त-सुमन .३७
भक्त-सौरभ .३१
भक्त-सुधाकर .५०
भक्तमहिलारत्न .४५
भक्त-दिवाकर .४५
भक्त-रत्नाकर .४५

आदर्श चरित-माला

भक्तराज हनुमान् .३१
सत्यप्रेमी हरिश्चन्द्र .३१
प्रेमी भक्त उद्धव .२०
महात्मा विदुर .१६
भक्तराज ध्रुव .२०
शिक्षाप्रद ग्यारह कहानियाँ .२५
सती सुकला .२५

परमार्थ-पत्रावली

,, भाग १ .२५
,, भाग २ .२५
,, भाग ३ .५०
परमार्थ-पत्रावली भाग ४ .५०
अध्यात्मविषयक पत्र .५०
शिक्षाप्रद पत्र .५०

कल्याण-कुञ्ज

,, भाग १ .२५
,, भाग २ .३१
,, भाग ३ .३७
महाभारतके आदर्श पात्र .२५
भगवान्‌पर विश्वास .२५
गीताप्रेस-लीला-चित्र मन्दिर-दोहावली .२५
गीताद्वार (गीताप्रेसका प्रवेशद्वार) .२५

बाल-चित्र-रामायण

,, भाग १ .२५
,, भाग २ .२५
बाल-चित्रमय चैतन्यलीला .३१
बाल-चित्रमय बुद्धलीला .३१
बाल-चित्रमय श्रीकृष्ण-लीला (भाग १) .३७
बाल-चित्रमय श्रीकृष्ण-लीला (भाग २) .३७

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भगवान राम भाग १ .२५
,, ,, भाग २ .२५
श्रीकृष्ण-रेखा-चित्रावलि
(प्रथम खण्ड) .३७
श्रीकृष्ण-रेखा-चित्रावलि
(द्वितीय खण्ड) .३७

भगवान श्रीकृष्ण

,, ,, भाग १ .३१
,, ,, भाग २ .३१
आरती-संग्रह .२५
सत्सङ्ग-माला .२५
बालकोंकी बातें .२५
वीर बालक .२५
सच्चे और ईमानदार
बालक .२५
गुरु और माता-पिताके
भक्त बालक .२५
बालकके गुण .२२
वीर बालिकाएँ .२०
दयालु और परोपकारी
बालक-बालिकाएँ .२०
जानकीमङ्गल .२०
श्रीपार्वतीमङ्गल .१२

हिंदी बाल-पोथी

शिशु-पाठ भाग १ .२०
,, भाग २ .२०
,, भाग ३ .३१
,, भाग ४ .३७
दैनिक कल्याण-सूत्र .२०
प्रार्थना .२०
आदर्श नारी सुशीला .२०
आदर्श भ्रातृ-प्रेम .२०
मानव-धर्म .२०
ध्यान और मानसिक पूजा .२०
गीता-निबन्धावली .१६
साधन-पथ .१६
अपरोक्षानुभूति .१६
मनन-माला .१६
बालकोंकी बोलचाल .१६
गङ्गासहस्रनाम सटीक .१६
बालकोंको सीख .१२
बालकके आचरण .१२
बालककी दिनचर्या .१२
नवधा भक्ति .१२
बाल-शिक्षा .१२
श्रीभरतजीमें
नवधा भक्ति .१२

CC-0. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गीता
वैराग्य-संदीपनी .१२
बरवै रामायण .१२

भजन-संग्रह

प्रथम भाग .१२
द्वितीय भाग .१२
तृतीय भाग .१२
चतुर्थ भाग .१२
पञ्चम भाग .१२

श्रीलक्ष्मीनृसिंहसहस्रनाम-
स्तोत्रम् .१६

श्रीश्रीराधिकासहस्रनाम-
स्तोत्रम् .१२

शिवसहस्रनामस्तोत्रम् .१०
श्रीरामसहस्रनामस्तोत्रम् .१०
,, सटीक .१५
श्रीगणेशसहस्रनामस्तोत्रम् .१२
गजेन्द्रमोक्ष .१०
बालप्रश्नोत्तरी .१०

स्त्रीधर्मप्रश्नोत्तरी
नारीधर्म
गोपी-प्रेम
मनुस्मृति
हनुमत्सहस्रनामस्तो
सीतासहस्रनामस्तोत्र
गायत्रीसहस्रनामस्त
तर्पण-विधि
वर्तमान शिक्षा
ध्यानावस्थामें प्रभु
वार्तालाप
श्रीविष्णुसहस्रनाम
हनुमानबाहुक
श्रीसीताके चरित्र
आदर्श शिक्ष
मनको वश करने
कुछ उपाय

सूचीपत्र मुफ्त मँगाइये—

यहाँ
पूछिये,
व्यवस्था

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi